International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly
ISSN – 2347-7075
Impact Factor –5.136
Vol.5 No.1 Sept– Oct 2017

विधिक साक्षरता के परिप्रेक्ष्य में महिला जागरूकता

डॉ. कल्पना निरंजन
एसोसिएट प्रॉफेसर (अर्थशास्त्र विभाग)
आर्यकन्या पी.जी. कॉलेज, झाँसी

टाइम्स ऑफ इंडिया में छपी एक खबर के अनुसार इस साल एनरोल हुए नए लॉ स्टूडेंट्स की संख्या में बढ़ोतरी हुयी और सबसे बड़ी बात ये कि कई कॉलेज ऐसे भी थे जहाँ पर लडकियों का प्रतिशत लड़को के प्रतिशत से ज़्यादा था। इस खबर का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि कुछ ही महीने पहले चीफ जस्टिक माननीय एन वी रमन्ना ने विधिक प्रतिष्ठानों में महिलाओं के लिए पचास प्रतिशत के रिजर्वेशन की बात कही थी।

इस सिफारिश ने भारत भर में न्याय के गलियारों को दो हिस्सों में बाँट दिया था। एक हिस्से का मानना था कि इस तरह के आरक्षण की सख्त जरूरत है। जबकि दुसरे तबके का ये कहना था कि पिछले कुछ सालों में एल एल बी एग्जाम क्वालिफाई करने वालो में लड़कियों की संख्या ज्यादा है। भारत के कुछ प्राइवेट लॉ इंस्टिट्यूट वो आंकड़े भी प्रदर्शित कर रहे थे जिनमें नजर आता है कि पिछले कुछ सालों में महिलाओं की संख्या बढ़ी है। इन लोगो का मानना है कि आरक्षण के आने के बाद संस्थानों की बाध्यता बढ़ जाएगी और एक स्तर पर लीगल करियर को अपनाने की महत्वाकांक्षा रखने वाले पूरुषो के लिए एक आर्टिफीसियल शोर्टेज पैदा हो सकती है जो आगे चल कर तरह तरह के भ्रष्टाचारो को जन्म दे सकती है।

मगर ये सभी तथ्य कपोल कल्पना भर है, पिछले दो दशको में भारत के न्याय गलियारों में महिलाओं का प्रतिशत काफी बढ़ा है। संख्या बल में ज़रूर बढ़ोत्तरी हुयी है मगर क्या इसे सही मायनों में नारी सशक्तिकरण कहा जा सकता है या नहीं इस पर एक बड़ा प्रश्न चिन्ह है।

भारत के लीगल सिस्टम में महिलाओं की स्थिति क्या है इसका आंकलन करने के लिए किसी को इन तीन प्रश्नों के उत्तर ढूंढना अत्यंत आवश्य हो जाता है।

:- यदि कोई महिला कानून की पढ़ाई कर ले तो क्या उसके लिए रोजगार के अवसर बढ़ जाते हैं?

:- क्या भारत में कार्य कर रहे न्याय के गलियारों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व की ज्यादा आवश्यकता है?

:- क्या भारत के न्यायालयों में महिला वकीलों का रोल स्टीरियोटाइप हो गया है?

विधिक साक्षरता ;स्महंस म्कनबंजपवदद्ध के क्षेत्र में महिलाओ की स्थिति एक ऐसा विषय है जिस पर पिछले कई वर्षो से अध्ययन किया जा रहा है। २००३ में चिंता व्यक्त की गयी थी कि भारत के न्यायालयो में महिला वकीलों का अभाव है ये चिंता व्यक्त की गयी थी मानवाधिकार आयोग से जुड़ी महिलाओं द्वारा। इन प्रबुद्ध महिलाओं का मानना था की बलात्कार और घरेलू हिंसा जैसे संवेदनशील मामलों में महिलाये अपनी शिकायत लिखाने में पुरूष वकीलों के साथ असहज महसूस करती है, इसकी वजह से कई बार मामले उचित धाराओं में दर्ज नहीं हो पाते, इसके आलावा जब मुकदमा ट्रायल पर जाता है उस समय भी महिला वकील की अनुपस्थिति तरह-तरह की बाधाये उत्पन्न करती है।

२००३ में उठे प्रश्न को गंभीरता से लिया गया, साथ ही साथ महिला जागरण एवं सशक्तिकरण की बयार के चलते भारत के कोर्टरूम्स में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ा, मगर ये प्रतिनिधित्व किसी ना किसी स्तर पर एक रूढ़िवादी भूमिका में परिवर्तित हो गया। महिलाओं की संख्या तो बढ़ी मगर उनको वो भूमिकाये नहीं मिली जिनकी मदद से वो करियर डेवलपमेंट की मुख्यधारा में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिला सके और कानूनी दांवपेचों के जौहर दिखा सकें।

ये भी एक चिंता का विषय है क्योंकि अब अकादमिक स्तर पर महिला वकीलों की संख्या बढ़ी है मगर उनके लिए संतुष्टिजनक रोजगार देने की स्थिति अभी भी नहीं आ पाई है।

यहाँ पर ये बात समझना भी आवश्यक हो जाता है कि ज़्यादातर भारतीय अब रोजगारपरक शिक्षा की तलाश में हैं। विधिक शिक्षा बहुत हद तक एक रोजगारपरक शिक्षा है मगर अकादमिक शिक्षा के साथ-साथ यहाँ सफल होने के लिए कई वर्षो तक टेबल प्रैक्टिस भी करनी पड़ती है। यदि रोजगार के दृष्टिकोण से देखा जाए तो निम्नवर्ग पर महिलाओं और परुषों के लिए समान अवसर है। उच्च स्तर पर यदि कोई महिला पहुँच जाए तो भी रास्ते आसान है, मगर माध्यमवर्ग पर महिला वकीलों की स्थिति उतनी अच्छी नहीं है। उन्हें

जिम्मेदारी से भरे काम इसलिए नहीं दिए जाते क्योंकि उनकी जिन्दगी व्यापार और घर संसार की चार दीवारी में बंधी हुयी है। ये माना जाता है कि शादी और गर्भावस्था की वजह से अक्सर महिलाओं को करियर से ब्रेक लेना पड़ता है, इन ब्रेक की वजह से अक्सर उन्हें जिम्मेदारी भरे काम नहीं दिए जाते।

एक संजीदा निर्णय या फिर सिर्फ गृहकार्य

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता, अर्थात जहाँ नारियो की पूजा की जाती है वहां देवताओ या देवपुरुषों का वास होता है। वैदिक काल में कही गयी ये सूक्ति दिखाती है कि भारतीय समाज ने सदैव नारियो को समाज में एक ऊंचा दर्जा दिया है। यदि इस समय के इतिहास पर नाटको के माध्यम से दृष्टि डाली जाए तो पाते हैं कि जो नारिया पुरुषों एवं परिवार से अलग अपनी पहचान बनाती थी उन्हें देवी की पदवी भी दी जाती थी। यहाँ पर वेदों में वर्णित मातृसत्तात्मक व्यवस्था का वर्णन करना भी समीचीन होगा, इस व्यवस्था के अनुसार परिवार की सबसे बड़ी बेटी को घर का मुखिया बनाया जाता था और लड़को को घर जमाई बनकर रहना पड़ता था। दूसरे शब्दों में ये भी कहा जा सकता है कि नारी पूजा करने पर देवताओ का वास होता है, इस सूक्ति के अनुपालन के कई जीवंत उदाहरण आज भी भारत में देखे जा सकते हैं। ये विचारधारा वैदिक काल से आज तक भारत में चली आ रही है और केरला जैसे राज्यों के गाँवों में आज भी प्रचलित है। जहाँ पर आज भी ऐसे परिवार है जिनमें मातृसत्तात्मक व्यवस्था प्रचलित है।

महिलाओं की विधिक शिक्षा के विषय में मातृसत्तात्मक नियोजन वाले परिवारों का जिक्र इसलिए भी जरूरी हो जाता क्योंकि ये सावित करता है कि महिलाये सिर्फ गृहणी ही नहीं निर्णायक की भूमिका भी निभा सकती हैं, इसके आलावा वो जिम्मेदारी के पद भी संभाल सकती हैं। मुखिया यानी वो पद जहाँ न्याय का वितरण करना और संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण करना आना चाहिए। अगर भारत की प्राचीन व्यवस्था को देखा जाये तो हम पाते हैं कि भारत में महिलाओं को हमेशा मुखिया का दर्जा दिया गया। अधिकतम समाजशास्त्री इस बारे में मनुस्मृति का उल्लेख भी करते हैं और कुछ श्लोकों के अनुवाद के आधार पर कहते हैं कि महिलाओं को दोयम दर्जे का स्थान दिया गया है। मगर जो आज हम देखते हैं वो मनुस्मृति का एक विकृत रूप है। शुद्ध वैदिक परम्पराए आज भी समाज में नारी को उच्च दर्जा ही देती है।

आपको ये बात जानकर ताज्जुब होगा कि जितना सम्मान महिलाओं को भारत में मिलता है, यानी उन्हें जीवन भर के लिए एक परिवार का मुखिया मान लिया जाता है ऐसे सम्मान के उदाहरण पश्चिमी देशों में कम ही नजर आते हैं। हाँ, यदि इन देशों में प्रगति के क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति देखें तो हम पाते हैं कि वहां पर ज्यादातर महिलाओ के साथ हो रहे पक्षापातपूर्ण रवैये का शिकार है, इसे परिभाषित करने के लिए बाकायदा एक नाम भी दिया गया है, ये नाम ग्लास सीलिंग है।

भारत में अगर लड़कियों और महिलाओं को कानूनी शिक्षा के पैमाने में मापा जाए तो हमें ये ग्लास सीलिंग स्पष्ट नज़र आ जाता है। इस लेख की शुरूआत में जो तीन प्रश्न अठाये गए हैं वो भी इस ग्लास सीलिंग का ही नतीजा है। नारी सशक्तिकरण के सारे दावों को सिर्फ इस तथ्य से नहीं तौला जा सकता कि कितनी लड़कियां या महिलाएं प्रत्येक वकील बन रही हैं। इसे तौलने के लिए जरूरी है कि हम इस तथ्य पर भी ध्यान दें की कितनी महिलायें प्रोफेशन के शीर्ष पर पहुँचती हैं और अपनी पोजीशन को तब तक बरकरार रख पाती हैं जब तक उनकी सक्रिय उम्र साथ देती है।

वकालत चाहती है कि आप दिन रात कानून की किताबों की साधना करें और साथ ही साथ आस पास हो रही घटनाओं पर भी बारीकी से नज़र रखें। यहाँ पर ये भी कहा जा सकता है वकालत एक परफार्मिंग आर्ट की तरह है जहाँ पर तार्किक और सक्रियता रोज आपको मजबूत करते हैं कि आप जिन्दगी एक कोरे पन्ने पर शुरू करें।

पश्चिमी देशों में महिलाओं की तरक्की के लिए अवसर भारत से ज्यादा है क्योंकि इन देशों की सामाजिक संरचना इस प्रकार की है। यदि ओहियो यूनिवर्सिटी में प्रकाशित एलिजाबेथ जिबेक के शोधपत्र पर नज़र डाली जाए तो कुछ चौंका देने वाले आंकड़े सामने आते हैं। पहला, सन् १९०१ से १९५० तक अमेरिका और कनाडा में महिला वकीलों का प्रदर्शन नगण्य है। ये शोध पत्र ये भी दर्शाता है कि १९७२ में जब अमेरिका में महिलाओं के मद्देनजर लीगल रिफार्म किये गए तब कोर्ट रूम्स में महिलाये नज़र तो आने लगी मगर उनमें से ज्यादातर महिला वकील निम्न स्तर व माध्यम स्तर की नौकरी तक ही सीमित रह गयी। लीगल करियर शुरूआत दौर में किसी भी वकील से कड़ी मेहनत और जबरदस्त टेबल पैंक्टिस डिमांड करता है। सही मायनों में देखा जाए तो ये टेबल प्रैक्टिस भी एक तरह की विधिक शिक्षा या फिर कहिये प्रायोगिक विधिक शिक्षा ही है।

भारत या किसी भी अन्य देश में महिला वकील लीगल अकादमिक स्तर पर अच्छा प्रदर्शन करने के बाद भी उच्च स्तर पर नहीं पहुँच पाती क्योंकि आम तौर पर उनकी प्रगति परिवार की जिम्मेदारी की वजह से या तो अस्थाई हो जाती है या फिर गर्भावस्था और अन्य स्थितियों की वजह से उन्हें अवकाश लेना पड़ता है। वे प्रचलित ज्ञान के मामले में पीछे रह जाती हैं।

भारत में भी कमोवेश यही स्थिति है, यहाँ पर भी लीगल रिफार्म आने के बाद एक नियम बना जिसके अंतर्गत महिलाओं को महिला वकील ही उपलब्ध करवाई जाती है, मगर इस तरह की नौकरी में तरक्की के अवसर कम ही होते हैं और महिला वकील सिर्फ एक कम्यूनिकेटर के रोल तक सिमटी रह जाती है। इसी प्रश्न को उठाया है लीगल जर्नलिस्ट मेघा कटारिया ने उनके शोध के अनुसार भारत में माध्यमिक स्तर पर पाई जाने वाली महिला वकीलों की बेहद कमी है। ये लेख अनुसार पिछले दस वर्षों में कई महिला वकीलों ने भारत के न्यायिक पटल पर अच्छा नाम और पैसा कमाया है, मगर इनके नाम ऊंगलियों पर गिने जा सकते हैं।

इसके अलावा एक पैमाना और भी है, वह पैमाना है कानूनी संस्था में महिलाओं की भागीदारी। उस स्तर पर भी हमें लिंग भेद जरूर नज़र आता है। यदि संगठित क्षेत्र में महिला और पुरुष जो कानूनी संस्था में हिस्सेदार भी हैं, उनका अनुपात देखा जाए तो हम पाते हैं कि महिलाएं दहाई का अंक भी नहीं छू पाती

ग्लास सीलिंग से हतोत्साहित विधि शिक्षा में कार्यरत महिलाएं

यदि कोई महिला वकील लीगल प्रैक्टिस में शिखर पर पहुँच जाती है तो इसे बड़ी उपलब्धि माना जाता है। पुरुषों का शिखर पर पहुंचना एक आम बात है। इस तरह की विचारधारा का असर अकादमिक क्षेत्र में भी दिखता है जहाँ पर महिलाएं अकसर ग्लास सीलिंग की वजह से अकादमिक स्तर पर ही हतोत्साहित हो जाती हैं और समझौता करके उन छोटी भूमिका में सीमित होने लगती है जो लिंगभेद की देन है।

कानून की विधिवत शिक्षा में आने के लिए लड़कियों ने रूचि दिखाई है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अगले दो दशकों में भारत के न्यायिक गलियारों की सूरत बदल सकती है और आज फैला हुआ पुरुष प्रभुत्व कम हो सकता है। पिछले कुछ वर्षों में गुणवत्तापूर्ण विधिक शिक्षा के लिए तरह तरह के प्रवेश परीक्षा आयोजित किये गये। इस छंटनी को हाई स्कूल, इंटर और स्नातक कक्षाओं के परिणामों से भी जोड़ कर देखा जा सकता है जहाँ पर पिछले एक दशक से लड़कियों का बोलबाला है। इन आंकड़ो के आधार पर यह निष्कर्ष भी निकाला जा सकता है कि निचले स्तर पर लड़कियों की उभरती प्रतिभा का असर अब हायर एजुकेशन में भी नज़र आने लगा है।

लड़कियां अब वकालत को एक प्रगति के विकल्प के तौर पर चुन रही हैं और सबसे बड़ी बात कम से कम अकादमिक स्तर पर उनका प्रदर्शन दिन प्रतिदिन सुधर रहा है। मगर इस अकादमिक यात्रा को अक्सर करके ग्लास सीलिंग के अवरोध लग जाते हैं। जरूरी ये है की भारत सरकार और इस दिशा में काम कर रही अन्य संस्थाओं को कुछ ऐसे कदम उठाने चाहिए जिनकी मदद से महिलाओं को वह सपोर्ट सिस्टम मिले जो उनके प्रगति को निर्बाध रूप से परिचालित करने में सहायक हो।

Reference

1. योजना – वर्ष 49 जनवरी 2006, पृ.33
2. अरूणा राय – राजस्थान पत्रिका, रविवारीय, 5 फरवरी 2006
3. राजकिशोर, भ्रष्टाचार की चुनौती, पृ.6
4. मानव अधिकार – संरक्षण एवं जागरूकता, शोध–संगोष्ठी, स्मारिका
5. सूचना का अधिकार अधिनियम – 2005
6. मानव अधिकार पत्रिका वर्ष 2006, प्रवेशांक, पृ. 97